Original Article
ISSN (Online): 2350-0530
ISSN (Print): 2394-3629

International Journal of Research - GRANTHAALAYAH
March 2022 10(3), 112–119

ADVENTUROUS SAINT KABIR'S SOCIAL PHILOSOPHY
साहसिक संत कबीर का सामाजिक दर्शन

Dr. Ashish Kumar Bithore [1]

[1] Department of Ancient Indian History, Culture and Archeology Vikram University Ujjain (M.P.), India

ABSTRACT

English: There is a difference of opinion among many scholars regarding the birth of Kabir, that Kabir was given birth by a widow. At the same time, according to the belief of Kabir Panthis, at the time when nature had covered the sky with cloud. The birds were singing the welcome anthem with their tweets, at such a time a divine child appeared in the lotus flower blooming in the Lahtara pond.
At the same time, some people say that Kabir was a Muslim by birth and at a young age he came to know about the alms of Hindu religion under the influence of Swami Ramanand.

Hindi: कबीर के जन्म् के विषय में अनेक विद्वानों का मतभेद है, कि कबीर को किसी विधवा ने जन्म दिया था। वहीं कबीर पंथियों की धारणा के अनुसार अतिरमणीय समय में जब प्रकृति ने नभमंडल को मेघमाला से अच्छादित कर रखा था। पक्षी अपने कलरव से स्वागत गान गा रहे थे ऐसे समय पर लहतारा तालाब में खिले हुए कमल-पुष्प में एक दिव्य बालक प्रकट हुआ हुआ।
वहीं कुछ लोगों का कहना है कि कबीर जन्म् से मुसलमान थे और युवा अवस्था में स्वामी रामानन्द के प्रभाव से उन्हें हिन्दू धर्म की भिक्षा मालूम हुई।.

Received 06 February 2022
Accepted 05 March 2022
Published 31 March 2022

CorrespondingAuthor

Dr. Ashish Kumar Bithore,
ashishbithore007@gmail.com

DOI
10.29121/granthaalayah.v10.i3.2022.4531

Funding: This research received no specific grant from any funding agency in the public, commercial, or not-for-profit sectors.

Copyright: © 2022 The Author(s). This is an open access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution License, which permits unrestricted use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original author and source are credited.

Keywords: Adventuresant, Kabir, Social Philosophy, साहसिकसंत, कबीर, सामाजिकदर्शन

इस संबंध में कहानी है कि एक दिन एक पहर रात रहते कबीर पंचगंगा घाट की सीढ़ियों पर विश्राम कर रहे थे। यहीं रामानन्द जी गंगा स्नान के लिये सीढियाँ उतर रहे थे कि तभी उनका पैर कबीर के शरीर पर पड़ गया। उनके मुख से तत्काल राम-राम शब्द निकला उसी राम को कबीर ने भिक्षा मन्त्र मान लिया और रामान्द जी को अपना गुरू स्वीकार कर लिया।
वहीं इतिहासकारों का मानना है कि कबीर साहब का जन्म् विक्रम संवत् 1456 (सन् 1398 ई.) की ज्येष्ठ पूर्णिमा को सोमवार के दिन हुआ था। इस सम्बन्ध में कबीर पंथ में एक दोहा प्रसिद्ध है:

चैदह सौ पचपन साल गये,
चन्द्रवार एक ठाठ ठये
जेठ सूदी बरसायत को,
पूरनमासी तिथि प्रकट भये।।

इस दोहे में पचपन साल गये की चर्चा आती है कबीर साहब के आविर्भाव के विक्रमी वर्ष के रूप में 1455 और 1456 दोनों तरह के साल लिखने और कहने की कथा प्रचलित है। जब 1456 साल कहते हैं तो इसमें नये शब्द का प्रयोग होता है यानी कि 1455 के साल बीत गये।

1455 साल के समाप्त होते ही 1456 साल की शुरूआत होती है। इसलिये जब 1456 कहते हैं तो वर्ष का प्रारम्भ मानते हैं। Acharya (2013)

1. प्रस्तावना

वहीं इतिहासकारों के एक वर्गों का मानना हैं। ज्येष्ठ पूर्णिमा के दिन नीरू अपनी पत्नी नीमा का द्विरागमन कराकर मांडुर गांव (वर्तमान मंडुवाडीह) से लहरतारा ताल के पूर्वी तट से होकर आ रहे थे। नीरू का घर नहरपुरा (वर्तमान कबीर चोरा) स्थान पर था।

निरू अपनी ससुराल से पत्नी को लेकर मडुवाडीह से नहरपुरा आ रहे थे। गर्मी का समय था, ज्येष्ठ मास के दोपहर की तपती धूप थी। नीरू और नीमा पालकी में सवार थे। गर्मी से परेशान नीमा को जोर से प्यास लगी हुई थी लहरतारा ताल के टीले के पास पालकी रूकी और सब लोग पेड़ के नीचे विश्राम करने लगे।

टीले पर वन उपवन की सुन्दरता छायी हुई थी। नीरू पेड़ के नीचे मन्द-मन्द हवा में झपकी लेने लगे और नीमा ताल के किनारे पानी-पीने के लिये चली गयी।

नीमा अभी अपने दोनों हाथों की अंजलि से पानी को मुँह में लगाने जा रही थी कि थोड़ी ही दूर पर नवजात शिशु के रोने की आवाज सुनायी पड़ी। नीमा ने पानी पीना बंद किया और अपनी पलकें उठाकर नवजात बच्चे की ओर देखा। नवजात शिशु ताल के ऊपर कुछ दूरी पर पड़ा था और अपने हाथ पांव फेंक रहा था। नीमा एक क्षण के लिये डरी, लेकिन हिम्मत करके बच्चे के पास पहुँच गयी। बच्चे की सुन्दरता और अलौकिकता देखकर नीमा मोहित तो हो ही गयी थी।

लेकिन लोक-लाज का भय नीमा को परेशान कर रहा था। नीमा ने अपने भीतर हिम्मत जुटायी और बच्चे को उठाकर नीरू के पास ले गयी। नीरू अचानक नीमा की गोद में नवजात शिशु को देखकर चैंक गये। दोनों में बच्चे को घर ले जाने के मामले में देर तक नोंक-झोंक और विवाद होता रहा। एक तरफ लावारिस बच्चे के लिये शासन-दण्ड का भय और दूसरी तरफ समाज की लोक-निन्दा का भय दोनों को पीड़ित कर रहा था। जितनी देर यह बातचीत चली, तब तक नीमा के हृदय में मातृत्व भाव जाग उठा था। नीमा की जिद पर नीरू को विवश होना पड़ा और अन्ततः दोनों सब-कुछ सहन करने के लिये तैयार हो गये और नीमा ने तालाब से लाकर दो बूँद पानी शिशु के मुँह में डाला। शिशु का चेहरा खिल उठा।

कबीर जुलाहा (बुनकर) जाति से थे ''यद्यपि 'जुलाहा' शब्द फारसी भाषा का है। '' तथापि इस जाति की उत्पत्ति के विषय में संस्कृत-पुराणों में कुछ न कुछ चर्चा मिलती है। ब्रह्मवैवतत्र पुराण के ब्रह्माण्ड के दशवें अध्याय में बताया गया है कि म्लेच्छ से कुन्दिकन्या में जोला या जुलाहा जाति की उत्पत्ति हुई। Dwivedi (1990)

म्लेच्छात् कुविन्दकन्यायां जोला जातिर्बभूत है।

इस प्रकार हिन्दू-पुराणों के मत से जुलाहा जाति का प्रादुर्भाव मुसलमान पिता और कुविन्द कन्या के आकस्मिक संयोग से हुआ। Gita (2017) कुविन्द एक शिल्पी या कलाकार है, उसका कार्य वस्त्र बुनना हैं।

आधुनिक काल में मनुष्य गणना के समय जुलाहा जाति के सम्बन्ध में जो तथ्य प्राप्त हुए हैं, उन पर से पुराण समर्थित आकस्मिक संयोग वाली बात का समर्थन नहीं होता। जुलाहे मुसलमान हैं। पर उनसे अन्य मुसलमानों का मौलिक भेद है। रिजली साहब का अनुमान है कि यह जुलाहा जाति किसी निम्न स्तर की भारतीय जाति का मुसलमानी रूप है। Crooke (1922) कबीरदास ने जुलाहों की जाति को कमीनी जाति कहाँ है और यह भी बताया है कि उन दिनों कभी यह जन-जाति जनसाधारण में उपहास और मजाक की पात्र थी। Das (2014)

कबीर के जन्म् के सम्बन्ध में लोक मान्यता है कि कबीर का जन्म् रामानन्द के आशीर्वाद से एक विधवा ब्राह्मणी के गर्भ से हुआ था। किन्तु उक्त ब्राह्मणी ने लोक-लज्जावश काशी के पास लहरतारा नामक स्थान पर नवजात शिशु को फेंक दिया। नीरू और नीमा नामक मुस्लिम जुलाहे कबीरदास को तालाब के किनारे उठाकर उनका पालन-पोषण करने लगे। अब बच्चा कुछ बड़ा हो चला था। नामकरण का समय आ गया। नीरू और नीमा ने नामकरण उत्सव का आयोजन किया। मुसलमानी प्रथा के अनुसार नामकरण करने के लिये काजी ने जब कुरान का पन्ना खोला तो उसमें चार नाम निकले-कबीर, अकबर, कुब्र और किब्रिया। इनमें से पहला नाम 'कबीर' ईश्वर-बोधक या महान् शब्द का अर्थ देता था और अन्य उसी के समानार्थी थे। इन सबके बाद उनका नाम कबीर रखा गया। और इसी के चलते कबीरदास जी ने समाज को समानता एवं प्रेम का नया दृष्टिकोण प्रदान किया।

वस्तुतः कबीर पढ़े-लिखे नहीं थे अपनी अवस्था के बालकों से बिल्कुल भिन्न थे। कबीर कहते है-

पोथी-पढ़ी पढ़ी जग मुआ, पंडित भया न कोई।
ढाई आखर प्रेम का पढ़े से पंडित होई।।

अर्थात् कबीर कहते है कि किताबे पढ़ने से कोई पण्डित नहीं हो जाता जबकि हृदय में ईश्वर प्रेम का वास नग्न हो।

कबीर का विवाह वनखेडी बैरागी की पलिता कन्या 'लोई' के साथ हुआ था। कबीर को कमाल व काम कमाली नाम की दो संताने थी, जबकि कबीर को कबीर पंथ में बाल ब्रह्माचारी और विराणी माना है। एक जगह लोई को पुकार कर कबीर कहते हैं-

कहत कबीर सुनह रे लोई।
हरि बिन राखन हार न कोई।

सम्भवतः ऐसा माना जाता है कि पहले लोई पत्नी होगी, बाद में कबीर ने शिष्या बना लिए होगा।

कबीर के समय को देखें तो ''कबीर भारतीय इतिहास के जिस युग में पैदा हुए, वह युग मुस्लिम काल के नाम से जाना जाता है। उनके जन्म से बहुत पहले दिल्ली में मुस्लिम शासन स्थापित हो चुका था। कबीर के समय तक उत्तर भारत की आबादी का एक अच्छा खासा भाग मुसलमान हो चुका था। स्वयं कबीर जिस जुलाहा परिवार में पैदा हुए थे, वह एक दो पीढ़ी पहले मुसलमान हो चुकी थी। Kishor (2001)

इस्लाम के भारत में आने के फलस्वरूप हिन्दू धर्म की जो पुर्नव्याख्या शुरू हुई उनमें हिन्दुओं को और भी हिन्दू बना दिया। हिन्दू धर्म ''तीर्थ, व्रत उपवास और होमाचार की परम्परा इसकी केन्द्र बिन्दु हो गई। इस समय पूर्व और उत्तर में सबसे प्रबल सम्प्रदाय नाथ पंथी योगियों का था। विभिन्न सिद्धियों के द्वारा वे काफी सम्मान और संभ्रम के पात्र बन गए थे। ये गुणातीत शिव या निर्गुण-तत्व के उपासक थे। कुछ काल के इस्लामी संसर्ग के बाद ये लोग धीरे-धीरे मुसलमानी धर्म-मत की ओर झुकने लगे, पर इनके संस्कार बहुत दिनों तक बने रहे। जब वे इसी प्रक्रिया से गुजर रहे थे उसी समय कबीर का आविर्भाव हुआ था। Dwivedi (1990) कबीर पर इसका जबरदस्त प्रभाव देखने को मिला है। कबीर ने इन सिद्धों एवं नाथों की तरह वर्ण व्यवस्था गैरबराबरी को चुनौती दी। गोरखनाथ के समय से ही नाथ पंथी लोग हिंदुओं और मुसलमानों के धार्मिक पाखंड, बाह्य आडम्बर, जातपात की कट्टरता, सामाजिक रूढ़िवाद इत्यादि के खिलाफ आन्दोलन चला रहे थे।

इस आन्दोलन की बागडोर नागपं थियों फकीरों के हाथ में थी। नाथपंथियों का यह आन्दोलन सामंतवाद के ऐसो-आराम, शाहखर्ची से लेकर उसके उन तमामा उपादानों के खिलाफ था जिससे जनता का शोषण हो रहा था। कबीर की समाज दृष्टि के अन्त सूत्र नाथों को इस प्रतिरोध में खोजा जा सकता है।

किसी रचनाकार की समाज दृष्टि, उसकी वैचारिक प्रतिबद्धता और सामाजिक पक्षधरता से ही बनती है। इस दुनिया के समानान्तर एक ऐसा समाज है, जो रचनाकार की रचना में सृजित होता है। रचनाकार के स्तर पर कबीर की पक्षधरता उसी जनता से है, जेा धर्म, कर्मकाण्ड और बाह्य आडम्बर में बुरी तरह फँसी हुई है। इस धर्म कांड और बाह्य आडम्बर को पहचानने की दृष्टि उन्हें अद्वैतवाद से मिलती है जिसके प्रति वैचारिक रूप से प्रतिबद्ध होती है यह अद्वैतवादी दृष्टि समाज में सबको एक समान या बराबर मानती है।

साहित्य का मुख्य प्रयोजन और प्रकार्य सामाजिक आलोचना भी है। ''साहित्य सामाजिक प्रवृत्तियों के संबंध में प्रायः कभी भी पूरी तरह तटस्थ नहीं हो सकता। वह पर्यावरण का सर्वेक्षण करता है और सामाजिक ¬प्रवृत्तियों की निगरानी भी। सामाजिक रीति-नीति, चाहे पुरानी हो या नयी, उसी टिप्पणी का विषय बनती हैं। Dubey (1991) कबीर जो मूलतः भक्त थे पर उनकी भक्ति को अभिव्यक्ति देने से जो साहित्य उपजा है, वह साहित्य भी अपने समय के सवालों से टकराने वाला साहित्य है।

भक्ति आन्दोलन अपने समय के सामाजिक-आर्थिक, राजनीतिक एवं धार्मिक स्थितियों से टकराहट से उत्पन्न हुआ था। वह शुद्ध रूप से धार्मिक आन्दोलन नहीं था।

के. दामोदरन लिखते हैं कि ''भक्ति आन्दोलन के रचनाकारों (कबीर आदि) ने सांस्कृतिक क्षेत्र में राष्ट्रीय नवजागरण का रूप धारण किया, सामाजिक विषयवस्तु में वे जातिप्रथा के आधिपत्य और अन्याय के विरूद्ध अत्यन्त महत्वपूर्ण विद्रोह के द्योतक थे।

इस आन्दोलन ने भारत में विभिन्न राष्ट्रीय इकाईयों के उदय को नया बल प्रदान किया, साथ ही राष्ट्रीय भाषाओं और उसके साहित्य की अभिवृद्धि की मांग भी प्रशस्त किया।

व्यापारी और दस्तकार, सामंती शोषण का मुकाबला करने के लिये, इस आन्दोलन से प्रेरणा प्राप्त करते थे। यह सिद्धान्त ईश्वर के सामने सभी मनुष्य फिर ऊँची जाति के हों अथवा नीची जाति के समान हैं। इस आन्दोलन का ऐसा केन्द्र बिन्दु बन गया, जिसने पुरोहित वर्ग और जाति प्रथा के आतंक के विरूद्ध संघर्ष करने वाले आम जनता के व्यापक हिस्सों को अपने चारों ओर एक जुट किया। Damodaran (2011)

कबीर के सामने एक ओर हिन्दू समाज था तो दूसरी तरफ मुस्लिम समाज। कबीर दोनों समाजों के धार्मिक आडम्बर एवं पाखण्ड के खिलाफ खड़े थें धर्म उनके लिये मात्र एक सत्य था, किन्तु हिन्दू-मुस्लिम धर्म में वे भेद नहीं मानते थे।

वे एकेश्वरवादी थे जिसके संदर्भ में इरफान हबीब लिखते हैं कि ''वास्तव में कबीर ऐसे एकेश्वरवाद की स्थापना करते हैं, जिसमें ईश्वर के प्रति पूर्ण समर्पण तो है परन्तु सारे धार्मिक अनुष्ठानों को नकारा गया है और इस तरह वह कट्टर इस्लाम से बहुत आगे निकल गया है। कबीर के लिये ईश्वर से एकाकार होने का अर्थ मनुष्यों का एक होना है और इसलिये वहाँ शुद्धता और छुआछूत की प्रथा को सम्पूर्ण रूप से स्पष्ट शब्दों में नकारा गया है तथा सब तरह के अनुष्ठानों को अस्वीकार किया गया है। Habeeb (n.d.)

''क्या अजू जप मंजन कीएँ, क्या मसीति सिरूनाएं।
दिलमहि कपट निवाज गुजारै, क्या हज कावै जाये। '' Tiwari (1961)

कबीर के समय में समाज में वर्णव्यवस्था जाति-भेद, छुआ-छूत का जबरदस्त बोल बाला था। कबीर ने उसका प्रतिवाद किया हैं वे कुल परिवार के श्रेष्ठता के आधार पर अपने को श्रेष्ठ मान लेने वालों पर तीखा व्यंग्य करते हैं-

ऊँचे कुल क्या जनमियाँ, जै करणी ऊँच न होई।
सोवण कलस सुरे भरया, साधूँ निंद्या सोई।। Das (2011)

अर्थात् कबीर कहते है कि ऊँचे कुल में जन्म् लेने से कोई महान नहीं होता अगर उसके कर्म अच्छे नहीं है। ठीक जिस प्रकार सोने के घड़े में यदि शराब भर दी जाये तो उसका मूल्य नहीं रहता है। उसी तरह अगर साधू गुणों से युक्त न हो तो उसकी निन्दा ही होती है।

भक्ति काव्य में तुलसीदास ने जिस तरह कवितावली में तत्कालीन यथार्थ को उकेरा है उससे कहीं गहरे अर्थों में कबीर अपने समय के यथार्थ को रच रहे थे। कबीर के समय का समाज धनी और गरीब के बीच बंटा हुआ था। किसी के पास अत्यधिक धन था तो किसी को दो जून की रोटी भी नसीब नहीं होती थी, यह मुहम्मद तुगलक का समय था। Asraf (2006)

कबीर को अस्वीकार के साहस वाला कवि कहा जाता है उनके अन्दर अपनी तत्कालीन समाज के उन प्रतिक्रियावादी तत्वों को अस्वीकार कर देने का साहस था जो समाज को पीछे ले जाती थी।'' यह अस्वीकार ही कबीर को निर्गुण संत के रूप में उनको अपनी अलग पहचान देता है। तैंतीस करोड़ देवी-देवताओं और दसियों अवतारों वाले देश में उन्हे एकेश्वरवादी होने का हौंसला प्रदान करता है- सारे अवतारों ओर देवी देवताओं का निषेध करते हुए उन्हें ईश्वर-ब्रह्म-अल्लाह, राम-रहीम से उस एक के ही अनेक नामों को जोड़ता है। यह एकेश्वरवाद ही उन्हें मस्जिद, मंदिर, काबा-काशी, तीर्थ व्रत-रोजा-उपवास-समाज-बंदगी सबसे अलग-घर घर में पिण्ड-पिण्ड में और दुनिया जहान में उन्हें देखने और पाने का विश्वास देता है। Mishra (2010)

कबीर अपने समय एवं समाज के कटु आलोचक ही नहीं बल्कि समाज को लेकर स्वप्न दृष्ट भी हैं। उनके भक्त मन में भारतीय समाज का एक प्रारूप है जिस पर वे दूर-दृष्टि के साथ काम कर रहे थे। ''वे मुसलमान होकर भी असल में मुसलमान नहीं थे। वे हिन्दू होकर भी हिन्दू नहीं थे। वे साधू होकर भी योगी (अग्रहस्थ) नहीं थे। वे वैष्णव होकर भी वैष्णव नहीं थे।Dwivedi (1952)

इस प्रकार कबीर का अपने समाज के प्रति दृष्टिकोण वैज्ञानिक एवं व्यवस्थित था। वो किसी प्रकार के बाह्य आडम्बर तथा शोषण के खिलाफ खड़े थे। साहसिक संत कबीर ऐसे समाज का निर्माण करना चाहते थे जो सुख-दुख दुदंधों से मुक्त भेद-भाव से परे प्रेम के मधुर वातावरण में राम नाम की साहस लेता हो और सच्चे अर्थों में आनंद बनाकर जीता हों।

कबीर ने सदैव सामाजिक आडम्बरों पर उपहार किया। साहसिक संत कबीर कहते हैं- कि यदि ब्राहाण्ड-ब्राहाण्डी उच्च है तो अन्य मार्ग से पैदा होकर आते ठीक उसी तरह मुस्लिम जन्म से खतना करवा कर आते अपनी दिव्य वाणी से कबीर ने लोगों की मनः स्थिति बदलने का पुनः प्रयास किया।

इस प्रकार साहसिक संत कबीर लोगों के विषय में कहते है जीते जी तो पिता को दण्डे मारते है और मरने के गंगा में तारते है। जीते जी अन्न नही खिलाते मरने पर पिण्ड दान करते है। जीवित पिता को गाली देते और मृतक का सरात करते है।

इसी तरह एक बात से ओर वह आश्र्य चकित थे कौआ का खाया पिया पितृ लोगों के पास कैसे पहुचता है। अर्थात् कबीर ने आज से लगगभग 600 वर्ष पूर्व वाणी से कबीर अपने ज्ञान से दर्पण दिखाया। साहसिक संत कबीर ने समाज की हिन, कुरूप और दयनीय दशा को बहुत गहराई से देखा और जाना। संत कबीर ने अपनी वाणी की कसौटी को कस कर पाखण्डियों की पाखण्डों को नंग्गा किया। कबीर कहते है कि संतों की सदैव से सामाजिक जिम्मेदारी रही है। कि वे आध्यत्मिक प्रगति के साथ-साथ सामाजिक कल्याण पर ध्यान दे।

इस प्रकार कबीर का अपने समाज के प्रति दृष्टिकोण वैज्ञानिक एवं व्यस्थित था वे किसी भी प्रकार आडम्बर एवं शोषण के प्रति खड़े थे।

इस संदर्भ में हजारी प्रसाद द्विवेदी ने लिखा भी है कि ''कबीरदास ऐसे ही मिलन बिन्दु पर खड़े थे, जहाँ एक ओर हिन्दुत्व निकल जाता था, दूसरी ओर मुसलमानत्व, जहाँ एक ओर ज्ञान निकल जाता है, दूसरी ओर अशिक्षा, जहाँ एक ओर योगमार्ग निकल जाता है, दूसरी ओर भक्ति मार्ग, जहाँ एक ओर निर्गुण भावना निकल जाती है, दूसरी ओर सगुण साधना उसी प्रशस्त चैराहे

पर वे खड़े थें वे दोनों को देख सकते थे और परस्पर विरूद्ध दिशा में किये गये मार्गों के गुणदोष उन्हें स्पष्ट दिखाई दे जाते थे।

कबीर ने स्वयं कभी कोई ग्रंथ नहीं लिखे उनके शिष्यों ने उसे लिखा।

2. निष्कर्ष

सारांशतः हम कह सकते है कि कबीर का भाषा पर जबरजस्त अधिकार था। उन्होने सामान्य बोलचाल की भाषा का प्रयोग किया। वाणी के ऐसे बादशाह को साहित्य रसिक काव्यानंद का आस्वादन कराने वाला समझें तो उन्हें दोष नहीं दिया जा सकता।

कबीर की कविता का एक-एक शब्द पाखंडियों के पाखंडवाद और धर्म के नाम पर ढोंग व स्वार्थपूर्ति की निजी दुकानदारियों को ललकारता हुआ आया और असत्य व अन्याय की धज्जियाँ उड़ाता चला गया। कबीर का अनुभूत सत्य अंधविश्वासों पर बारूदी पलीता था।

सत्य भी ऐसा जो आज तक के परिवेश पर सवालिया निशान बन चोट भी करता है और खोट भी निकालता है। कबीर ने कभी स्वयं ने ग्रथं नहीं लिखे उनके शियों ने लिखा है। संत कबीर की रचनाएं मुख्यतः कबीर ग्रंथावली में सग्रंहित है। किंतु कबीर पंथी में उनकी रचना बीजक ही प्रमाणित माना जाताा है। कुछ रचनाएं गुरू ग्रन्थ साहब में संकलित है कबीर की अभिव्यक्ति आत्म व्यक्ति जगत बोद्ध के रूप में हुई।

अन्ततः कबीर ने काशी के पास मगहर में देह त्याग दी। ऐसी मान्यता है कि मृत्यु के बाद उनके शव को लेकर विवाद उत्पन्न हो गया था। हिन्दू कहते थे कि उनका अंतिम संस्कार किया जाय मुस्लिम ने कहाँ की उन्हें दफनाया जाये।

और मान्यता है कि जब कबीर के शव चादर हटाई गई तो यहाँ फूलों का ढेर पड़ा देखा। उन्ही फूलों में से आधे हिन्दू ने ले लिए आधे मुसलमानों ने और रीति-रीवाज के अनुरूप उनका संस्कार किया वर्तमान में मगहर (उत्तर-प्रदेश) में कबीर की समाधि है। जन्म् की तरह इनकी मृत्यु पर भी मतभेद है किन्तु विद्वान इनकी मृत्यु संवत -1575 विक्रमी (सन्-1518ई.) मानते है। प्रति वर्ष 24 जून को संत कबीर दास जयंती मनाई जाती है। (ज्येष्ठ-पूर्णिमा)

15 वीं शताब्दी के रहस्यवादी कवि, संत एवं समाज सुधारक तथा भक्ति आंदोलन के प्रस्तावक थे। कबीर दास के लेखन का भक्ति आंदोलन पर गहरा प्रभाव देखा गया।

कबीर को उनके दो पंक्ति वाले दोहों के लिए प्रसिद्धी मिली जिसे 'कबीर के दोहे' नाम से जाना जाता है। कबीर प्रायः सभी सत्तावादी मठवासी व्यवस्था के विरोधी थे। मूर्ति पूजा के उन्मूलन में कबीर ने काफी सहयोग किया। कबीर निर्गुण भक्ति की बात करते हैं।

पाहन पूजे हरि मिले, तो मैं पूजूँ पहार।
ताते ये चाकी भली, पीस खाय संसार

भक्तिकालीन संत कवि कबीर का रचनात्मक संवाद आज की जीवन स्थितियों में प्रासंगिक है क्योंकि कबीर ने जिन मूल्यों एवं प्रश्नों को उठाया वे वर्तमान समाज व सभ्यता में संकटो को पहचानने में मदद करते हैं।

साथ ही आधुनिक मनुष्य को बेहतर विकल्प की तलाश के लिए प्रेरित करते हैं। कबीर का जीवन दर्शन मूल संकट की पहचान करता है। आज बाजार की चकाचैंध के मध्य राष्ट्र मानवता, सामाजिकता, नैतिकता जैसी चीजों का बोध खत्म होता जा रहा है। कबीर के दोहे इन्हें समझने के लिए शक्ति प्रदान करते हैं। कबीर की भाषा अभिजात्य वार्गों के दुर्गों को तोड़ती हुई सरलता व सहजता पर बल देती है। मध्यकाल में धर्म का कर्मकाण्डीय स्वरूप ब्रह्मणवादी वर्ण व्यवस्था एवं विलासिता अभिमान्यता के लक्षण थे। वर्तमान में भी ये नये रूपों में संकट बने हुए है। कबीर की कविता/दोहे इनमें मुठभेड़ करते प्रतीत होते है।

कबीर कहते है "में कहता आंखन देखी, जो है उसे स्पष्ट व साफ रूप में कहना कबीर का अपना अंदाज रहा है। संत कबीर कहते हैं –

सुखिया सब संसार है खावै अरू रोवै।
दुखिया दास कबीर है जागै अरू रोवै।।

इस तरह शोध मूलक दृष्टिकोण के आधार पर हम कह सकते है कि सर्वधर्म, सम्भाव, समदृष्टि, अपरिग्रह, कर्म योग तथा दया आदि मानवीय गुण कबीर के मूल मंत्र है।

समाज ही नहीं अपितु प्रबुद्ध प्रगतिवादी समाज के लिये भी कबीर इतने सार्थक है कि उनके दोहे कभी भी भूत, भविष्य वर्तमान में अप्रसांगिक होना सम्भव ही नहीं है। कबीर का ज्ञान मानव समाज के माथे पर चन्द्रमा के समान है। जो सदैव दीप्तिमान रहेगा। और मानव पद को सदैव अग्रसर करता रहेगा।

हम कह सकते है कि संत कबीर वास्तव में ऐसे साहसिक संत थे जिन्होंने जीवन के सत्य का संदेह ह्रदयगत सौन्दर्य के दृष्टिकोण से रखा। संत कबीर का मानना था कि यदि मनुष्य धर्म को समग्रता से ग्रहण करे तो समाज में विषमता नहीं फैलेगी। वर्तमान में कबीर हम सभी में किसी न किसी रूप में मौजूद है।

REFERENCES

Acharya, V.D (2013). Kabir Jeevan Katha [Kabir Life Story] (3rd ed.). Kabirvaani Prakashan Kendra, 7. https://www.flipkart.com/kabir-jeevan-katha/p/itm4044d4dc088f3

Dwivedi, H.P (1990). Kabeer. Rajkamal Prakashan, 115-139. https://www.pustak.org/index.php/books/bookdetails/3228

Gita Press Gorakhpur (2017). Brahma Vaivarta Puran, 132. https://amzn.to/3J90kWP

Risley, H.H (1922). The People Of India. Alpha Edition. 123. https://amzn.to/3KdA8eO

Das, S.S (2014). Kabeer Granthawali. Lokbharti Prakashan. 270. https://amzn.to/3DDAHMJ

Kishor, R (2001). Saint Kabeer Kee Khoj[search of saint kabir]. 53

Dubey, S (1991). Parampara, Itihas Bodh Aur Sanskriti[Tradition History and Culture]. Radhakrishna Publications, New Delhi. 154. https://www.flipkart.com/parampara-itihas-bodh-aur-sanskriti/p/itmdwaffhdf4ycvc

Damodaran, K (2011). Bharatiya Cintana Parampara[Indian tradition of thought]. People's Publishing House, 315. http://www-lib.tufs.ac.jp/opac/en/recordID/catalog.bib/BA4786519X?caller=xc-search

Habeeb, I (N.D.). Saampradaayikata Aur Sanskrtik Ke Saaval[Questions of Communalism and Culture] . 23

Tiwari, P (1961). Kabir Granthawali [Sant Kabir Granthawali]. Hindi Parishad Prakashan Prayag University. 103. https://archive.org/details/KabirGranthawaliByParasnathTiwarihindi

Das, S.S (2011). Kabir Granthavali. Lokbharti Prakashan 85. https://www.hindisamay.com/kabir-granthawali/kabirgranth-index.htm

Asraf, K.M (2006). Hindustan Ke Nivasiyau Ka Jivan Aur Unki Paristhiyan[The life and circumstances of the inhabitants of India]. Hindi Madhyam Karyanvaya Nideshalaya Delhi University. 158. https://www.exoticindiaart.com/book/details/life-and-their-circumstances-of-inhabitants-of-india-nzp718/

Mishra, S.K (2010). Bhakti Aandolan Aur Bhakti Kaavy [Bhakti Movement and Bhakti Kavya]. Lokbharti Publications. 107. https://www.exoticindiaart.com/book/details/bhakti-movement-and-bhakti-kavya-nzp873/

Dwivedi, H.P (1952). Hindi Sahitya : Udbhav Aur Vikas [Origin and Development of Hindi Literature]. Rajkamal Publications. 15. https://amzn.to/3LFbGn4